गुरु दीक्षा

एक बार श्री गुरु नानक जी की गद्दी के छठे सन्त मीरी पीरी के शहनशाह गुरु श्री हरगोबिन्द जी अमृतसर से पहाड़ी इलाके में शिकार खेलने के लिए गए। इनके साथ उस समय इनके बड़े साहिबजादे गुरु दित्ता जी तथा सुथरे शाह जी भी थे। संयोगवश वहाँ से आप श्रीचन्द्र जी के निवास स्थान पर पहुँच गए। श्रीचन्द्र जी साक्षात् शिव का अवतार थे। दुष्टों के दमन तथा सज्जनों की रक्षा के लिए ही श्रीचन्द्र जी ने गुरु नानक देव जी के घर जन्म लिया था। इनकी इच्छानुसार ही ये सभी देवगण भी क्रमानुसार इस धरती पर प्रकट हुए।

ब्रह्मा (गुरुदित्ता), सनकादिक (अलमस्त) (बालू हसना) (गोइंद साहब) (फूल साहब) नाम से सूर्य (भगत भगवान), इन्द्र (करतार राय), धर्मराज (धर्म चन्द्र), वरुण (अजीतानन्द), अग्नि (सुथरा साहब), जल (मीहाँ साहब), बुद्ध (वक्रानन्द), गणेश (संगत साहब), वीर भद्र (कृपाल दास), कार्तिकेय (वनखण्डी जी), दक्ष (श्री प्रीतम दास जी), कुबेर (संतोषदास) के नाम से, सभी ने उदासीन भेष में रह कर संसार का परम उपकार किया।

एक दिन बाबा श्रीचन्द्र जी ने गुरु श्री हरगोबिन्द जी से फरमाया कि ये दोनों बालक आप हमें दे दीजिए। बाबाजी के ये वचन सुनकर गुरु जी ने उसी समय दोनों बालकों को उनके चरणों में डाल दिया तथा कहा कि आज से ये दोनों बालक आपके हैं। गुरु श्री हरगोबिन्द जी दोनों बालकों को वहीं छोड़कर वापिस अमृतसर आ गए। तब गुरु दित्ता जी तथा सुथरे शाह जी ने आषाढ़ शुक्ला १५ पूर्णिमा के दिन श्रीचन्द्र भगवान को गुरु धारण कर उसी समय गुरु चरण धोए तथा चरणामृत लिया। श्री चन्द्रजी ने श्रौत चतुर्थाश्रम की दीक्षा दे उदासीन धर्म के समस्त नियम बताए, उदासीन भेष धारण कराया।

श्रीचन्द्र जी गुरु दित्ता तथा सुथरे शाह जी को कान में गुरु मंत्र दे गुरु शिष्य परम्परा के अनुसार उन्हें आदेश देते हुए बोले-'आज समय के परिवर्तन से भारतवर्ष में शिक्षा, धर्म तथा मानव जीवन में बहुत अन्तर आ गया है। मुसलमानों के बढ़ते हुए अत्याचारों के कारण भारतवर्ष में हिन्दुओं की दशा दयनीय हो गई है। नारी जाति जिसे 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' कहकर पूजा जाता था, उनकी लाज भी आमोद प्रमोद की सामग्री बनी हुई है। नाना मतमतान्तरों ने हिन्दू जाति को खोखला बना दिया है। तान्त्रिक लोगों का घृणित व्यवहार भी हटाना होगा। वो लोग बाहर से तो अपने आप को वेदानुयायी बताते हैं किन्तु अन्दर से वेदों के विपरीत चलते हैं, इससे श्रौत सिद्धों पर कलंक लगता है। हमारे हिन्दू भाई जो लोभ-लालच, छल-कपट आदि से इस्लामी बना दिए गए हैं उनके इस अत्याचार को रोकना सबसे प्रथम कार्य आपको करना है।'

सुथरे शाह जी गुरु सेवा में अपना जीवन व्यतीत करने लगे। असंख्य लोग श्रीचन्द्र जी के पास आते, उनके दृष्टिपात से ही सबके कार्य सिद्ध हो जाते। एक बार श्रीचन्द्र जी समाधि पर बैठे थे। सुथरेशाह जी उनके प्रभावशाली मुखारविन्द को देखकर उनके समक्ष ही बैठ गए। जब महाराज जी की समाधि खुली तब हाथ जोड़कर महाराज जी से पूछने लगे - 'आप कौन भेष के साधु हैं? मैं कौन हूँ? किसलिए इस संसार में आया हूँ? कृपया मेरे आने का प्रयोजन बताइए?' यह प्रश्न करते करते उनकी आँखों से आँसू बहते जा रहे थे। तब भगवान श्रीचन्द्र जी ने उत्तर दिया— ' जिस भेष को ईश्वर ने पसन्द किया। जिस भेष में सनकादिक, नारद, कपिल, दुर्वासा, विश्वामित्र आदि प्रभृत रहे। जो अनादि श्रौत चतुर्थाश्रमी उदासीन भेष वेद शास्त्र प्रतिपादित जगत प्रसिद्ध है। उसी भेष के हम साधु हैं।'

सुथरे शाह जी पुनः बोले - 'आप संसार के पालनकर्ता हैं। सृष्टि के ईश्वर हैं। आप साक्षात भगवान शंकर है। ऋद्धि सिद्धि आपके चरणों की दासी हैं।

आप सर्वज्ञ है, दया के अपार समुद्र हैं, विश्व के नायक हैं। समस्त चराचर आपके आधार से आधारित है। बड़े-बड़े योगिजन भी अविद्या रूपी ग्रन्थि भेदने के लिए सदा आपका ही चिंतन करते रहते हैं।' यह कहकर सुथरे शाहजी ने गुरु चरणों में प्रणाम कर हाथ जोड़कर पूछा - 'मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? मेरे माता पिता कौन हैं? मेरा इस संसार में आने का प्रयोजन बताइए।'

भगवान श्रीचन्द्र जी आँखे बन्द कर कुछ देर के लिए समाधिस्थ हो गए, फिर बोले - तुम अग्नि देव हो, जो हमारी इच्छा से ही इस धरा धाम पर अवतरित हुए, तब उन्होंने उनके जन्म की कथा सुनाई। एक बार हम गुरदासपुर के पास एक टाली (शीशम) के वृक्ष के नीचे बैठे तपस्या कर रहे थे। तभी गुरदासपुर निवासी बिहारी लाल नन्दा जो निःसंतान थे, हमारा दर्शन करने हेतु वहाँ आ गए। तब उन्होंने हाथ जोड़कर बड़े नम्र भाव से कहा - महाराज, मुझे धन तो परमात्मा ने बहुत दिया है परन्तु सन्तान कोई नहीं है। यही चिन्ता हम पति-पत्नी को सताती रहती है। आप कृपा करके मेरा इस कष्ट से उद्धार करो। साथ ही संसार बन्धन से छूटने का उपाय भी बताने की कृपा करें। तब हमने उन्हें उपदेश दिया - संसार के सब पदार्थ नाशवान हैं, इनको पाकर कभी अभिमान नही करना चाहिए। जहाँ तक हो सके अपने हिन्दू भाइयों की रक्षार्थ धन खर्च करना सबसे उत्तम कार्य है। यदि मनुष्य सब दुखों से छूटना चाहे तो सांसारिक पदार्थों से उपराम रहे, किसी उत्तम ब्रह्मनिष्ठ उदासीन साधु से उपदेश ले। आत्मानन्द का रस लेता हुआ जीवन मुक्त हो विचरे। भाई-बहन, माता-पुत्र आदि जितने भी ये शरीर के संबंध है कर्मों की डोरी से बन्धे हैं। जब कर्मों का लेन-देन समाप्त हो जाता है यह डोरी टूट जाती है। जिस प्रकार नदी के प्रवाह में बहते हुए तिनके हवा के झोंके से मिल जाते हैं, कुछ देर लहरों पर थिरकते हुए, नाचते हुए, तैरते हुए साथ बहते जाते हैं और फिर लहर का एक थपेड़ा लगते ही अलग हो जाते हैं। उसी प्रकार ये जीव अनेक कर्मों के संबंध से एक दूसरे से मिल जाते हैं और इस क्षणिक संबंध को चिर शाश्वत समझ कर मोह के बंधन में

बंध जाते हैं। समय का एक छोटा सा थपेड़ा लगता है और कर्मों की डोरी टूट जाती है और फिर एक दूसरे से बिछुड़ जाते हैं। कोई नहीं जानता वह कहाँ से आया है? कहाँ जा रहा है? कहाँ तक उसका संबंध है? मनुष्य को मोह त्यागकर भगवान प्राप्ति की इच्छा के सिवाय और कोई इच्छा नहीं करनी चाहिए।

यह सुनकर बिहारी लाल नन्दा जी को उपरामता आ गई। तब वे गुरु मंत्र ले सेवक बन गए। हमने उन्हें आशीर्वाद दिया कि तुम्हारी पुत्र इच्छा भी वृद्धावस्था में सफल होगी और वह पुत्र परम ज्ञानवान हो उदासीन भेष धारण कर संसार में हिन्दू धर्म का प्रचार करेगा, तथा आपकी संसार रूपी सागर के बन्धन से मुक्त होने की इच्छा भी पूर्ण होगी। इस प्रकार श्रावण पूर्णिमा १६७२ को गुरदासपुर निवासी बिहारी लाल नन्दा जी के घर आपका जन्म हुआ। यह विधि का विधान ही था कि आपके पैदा होते ही आपके माता-पिता ने आपका त्याग कर दिया व गुरु श्री हरगोबिंद साहिब जी ने अपने पुत्रों के समान ही आपका पालन पोषण किया।

इस घटना से तुम्हारे पिताजी को वैराग्य उत्पन्न हो गया व उनकी इस संसार रूपी सागर के बंधन से मुक्त होने की इच्छा भी पूर्ण हुई। किन्तु तुम्हारी माता यशदेवी तुम्हारे वियोग को सह न सकी। उसका अधीर होना स्वाभाविक ही था। वह कभी अचेत हो जाती तो कभी सचेत होकर कहने लगती - 'हा पुत्र, आज तक सब लोग मुझे अभागिन समझते थे व बाँझ कहकर ताने देते थे। इन सबको मैं ईश्वर का विधान समझकर सहन कर लेती थी। किन्तु अब मैं कैसे धीर धारण करुँ? मेरे से तो वह गाय भी श्रेष्ठ है जो दुर्बल होने पर भी अपने बछड़े के पीछे चल पड़ती है। मैं तो पत्थर से भी कठोर हूँ, पत्थर भी नदी के थपेड़ों से टूट जाते हैं। किन्तु मेरा हृदय इतने महान दुख को सहन कर भी नहीं टूटा।' इस प्रकार सोच-सोच कर वह अचेत हो जाती। उसने रो-रो कर अपने आँखों की ज्योति खो दी।

वह बिल्कुल अंधी हो गई और जीवन का शेष भाग बहुत ही दुख के साथ काटा।

सुमित्रा, मदालसा या सुनीति आदि कुछ माताएँ तो अपवाद हैं जिन्होंने हँसते-हँसते अपने पुत्रों को ब्रह्मज्ञानी या रामभक्त बनाकर जंगल का रास्ता दिखाया परन्तु अधिकतर माताएँ तो अपने पुत्रों को महान बनाकर आँसू बहाती रहीं। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम चौदह वर्ष के वनवास में धर्म की स्थापना तथा अधर्म का उन्मूलन करते रहे। किन्तु उनको जन्म देने वाली माँ कौशल्या उनके वियोग में आँसू बहाती रही। इसी प्रकार भगवान श्री कृष्ण अपनी लीलाओं से गोप गोपिकाओं को आनन्दित करते रहे, परन्तु उनको जन्म देने वाली माँ देवकी कंस के कारागार में पड़ी दुख भोगती रही। इसी प्रकार तुम्हारी माँ यशदेवी भी तुम्हारे वियोग को न सह सकी व अंधी हो गई।